NALANDA OPEN UNIVERSITY

Course : **M.A Psychology, Part-I**

Paper : **Paper-I**

Prepared by : **Dr. (Prof.) Prabha Shukla**
Retd. Professor of Psychology, Patna University and
Chief Co-ordinator, School of Social Sciences
Nalanda Open University

Topic : **अभिप्रेरणा (Motivation)**

अभिप्रेरणा (Motivation)

1.1 परिचय (Introduction)

आप जो भी कार्य करते हैं उसके पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है इसी कारण को अभिप्रेरण के रूप में समझा जा सकता है। अत: अभिप्रेरण एक ऐसी अवस्था है जो व्यक्ति को कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। जैसे, भूख एक अभिप्रेरण है जो व्यक्ति को खाने से सम्बन्धित व्यवहार के लिए प्रेरित करती है।

प्राणी के व्यवहार के पीछे कौन से शक्ति छिपी रहती है जो प्राणी को अनुक्रिया, विशेष व्यवहार करने का बाध्य कर देती है। मानव का व्यवहार गत्यात्मक (Dynamic) होता है। हमारे जीवन की कई आवश्यकताएं हैं, हमारे सामने कई उद्देश्य हैं, तथा कई लक्ष्य हैं। हम उन लक्ष्यों को पाने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। सभी प्राणियों के प्रयत्न करने के तरीके अलग हो सकते हैं तथा उनके व्यवहार अलग-अलग हो सकते हैं। प्रश्न यह उठता है कि इन सब व्यवहारों के प्रति कौन सी शक्ति है जो प्राणी को चलायमान रखती है। जिस प्रकार स्कूटर चलाने के लिए पेट्रोल की आवश्यकता होती है। पेट्रोल के अभाव में स्कूटर का कोई महत्व नहीं होता। उसी प्रकार प्राणी की क्रियाओं के पीछे जो शक्ति हैं जो उसे चलायमान रखती है, अनुक्रिया के लिए बाध्य करती है मनोविज्ञान में प्रेरणा (Motivation) के नाम से जानी जाती है।

1.2 अभिप्रेरण का अर्थ (Meaning of Motivation)

अभिप्रेरण व्यक्ति की एक आन्तरिक अवस्था है जिसके कारण उसमें कोई व्यवहार उत्पन्न होता है और कुछ समय तक बना रहता है। इसकी परिभाषा देते हुए विटिंग एवं विलियम तृतीय (Witting and William III, 1984) ने कहा– "अभिप्रेरणा अवस्थाओं का एक ऐसा समुच्चय है जो व्यवहार को सक्रिय करता है, निर्देशित करता है तथा किसी लक्ष्य की ओर उसे बनाए रखता है (Motivation is a set of conditions which activate direction and maintain behaviours towards some goal)"

बेरन (Baron) व उनके साथियों के अनुसार, "मनोविज्ञान में हम अभिप्रेरण को एक काल्पनिक आन्तरिक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करते हैं जो व्यवहार करने के लिए शक्ति प्रदान करता है तथा उएक विशेष उद्देश्य की ओर व्यवहार को ले जाता है।" इस परिभाषा में आन्तिरिक प्रक्रिय को शक्ति माना है जो व्यवहार के लिए प्राणी को प्रेरित करती है।

"In psychology we define motivation as a hypothetical internal process that provides the energy for behaviour and directs in towards specific goal."

— Baron, Byrne and Kautowitz,

इसी का समर्थन करते हुए गिलफोर्ड (J.P. Guilfor, 1957) ने अपनी पुस्तक 'सामान्य मनोविज्ञान' में लिखा है कि "प्रेरणा एक विशेष मानसिक आन्तरिक अवस्था है जो किसी क्रिया के प्रारम्भ करने अथवा निरन्तर बनाये रखने की प्रकृति रखती है।"

"A motive is any particular internal factor or conditioin that trends to initiate and to sustain activity." — J.P. Guilford, General Psychology, 1957

इसी प्रकार मन (Munn, 1967) के शब्दों में प्रेरित शब्द का अर्थ गतिवान होना अथवा क्रियान्वित होना है, इस रूप में कोई भी शक्ति जो क्रिया को उत्पन्न करती है चाहे वह आन्तरिक हो या बाह्य, प्रेरणा कहलाती है।

इसी सन्दर्भ में हिलगार्ड तथा एटकिंसन (E.R. Hilgard & Atkinson, 1967) के अनुसार, "प्रेरक से हमारा तात्पर्य उस वस्तु से है जो प्राणी को कार्य करने के लिए उत्तेजित करती है अथवा प्राणी के एक बार कार्य करने के लिए तैयार हो जाने के बाद क्रिया करने के लिए निर्देशित तथा उत्साहित करती है।"

"By a motive, we mean something that incites the organism to action that sustain and gives direction to action once the organism has been aroused." Introduction to Psychology.

— E.R. Hilgard and R.C. Atkinson, (1967)

एटकिन्सन के अनुसार, "अभिप्रेरणा एक अथवा अधिक प्रभावों के उत्पन्न करने के लिए, व्यक्ति में करने की प्रवृत्ति के उद्वेलित करती है।"

'The term motivation refers to the arousal of a tendency to act, to produce one or more effects." —Atkinson : An Introduction to Motivation, (1964)

उपर्युक्त सभी परिभाषाओं पर यदि गौर किया जाए तो यह स्पष्ट है कि प्रेरणा एक आन्तरिक शक्ति है जो प्राणी की किसी क्रिया को प्रारम्भ करती है तथा उसके व्यवहारों को एक विशेष दिशा में उद्देश्य की प्राप्ति की ओर अग्रसर करती है। उपर्युक्त विभिन्न मनोवैज्ञानिकों के द्वारा प्रेरणा की परिभाषाओं के मंथन से प्रेरणा का स्वरूप स्पष्ट हो रहा है। अतः हम कह सकते

हैं कि अभिप्रेरण एक प्रक्रम (Process) है जो प्राणी की किसी क्रिया को आरम्भ करती है तथा उसे विशेष दिशा की ओर निर्देशित भी करती है। लक्ष्य प्राप्ति के लिए विशेष प्रयत्न करना व्यवहार को दिशा देना कहलाता है। इस प्रकार एक प्रेरक से हमारा अभिप्राय प्राणी की उस आन्तरिक दशा या कारक से है जो लक्ष्योन्मुख व्यवहार को आरम्भ करती है और तब तक जारी रखती है जब तक कि लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाये।

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर प्रेरणाओं की विभिन्न विशेषताएं अग्र प्रकार हैं–

(1) **ऊर्जा** (Energy) **उत्पन्न करती हैं**– जैसा कि मन (Munn, 1967) ने अपनी परिभाषा में बताया है कि कोई भी शक्ति जो क्रिया को उत्पन्न करती है, चाहे वह आन्तरिक हो या बाह्य, प्रेरणा कहलाती है। प्रयोगिक अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि सामान्य अवस्था की अपेक्षा अभिप्रेरक व्यवहार में अधिक ऊर्जा और उद्वेलन दिखलई देता है।

(2) **प्रेरित व्यवहार लक्ष्योन्मुख होता है** (Goal Directed Behaviour)– प्रेरित व्यवहार लक्ष्योन्मुख होता है। प्राणी के सामने लक्ष्य स्पष्ट रहता है, वह उसी को प्राप्त करने के लिए विशिष्ट व्यवहार अथवा प्रयास एक विशेष दिशा में ही करता है।

(3) **चयनता** (Selective)– प्राणी में यदि लक्ष्य स्पष्ट है और उसका प्रेरित है तो प्राणी उसी चीज को पाने के लिए प्रयन्तशील रहता है। वातावरण में बहुत से उद्दीपक रहते हैं लेकिन प्राणी अपने लक्ष्य प्राप्ति के अनुसार चयनित व्यवहार की ओर निर्देशित होता है। यदि उसे कक्षा में प्रथम दर्जा प्राप्त करना है तो उसका ध्यान अच्छी पुस्तकों का चयन करना विशेष लक्ष्य बन जाता है।

(4) **निरन्तरता** (Continuity)– प्रेरक प्राणी के व्यवहार को एक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए न केवल आरम्भ करते हैं बल्कि प्राणी निरन्तर लक्ष्य प्राप्ति तक प्रेरित व्यवहार करता है जब तक कि उसका ध्येय पूरा नहीं हो जाता है। वह निरन्तर लक्ष्य प्राप्ति के लिए प्रयास करता रहता है। यह प्रयोगों से भी सिद्ध किया जा चुका है।

(5) **परिवर्तनशीलता** (Changability)– जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि प्राणी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रयत्न करता रहता है। लेकिन लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए विभिन्न आयाम अपनाता है, अनेक तरीके, तथा अनेक साधन अपनाता है। कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करना लक्ष्य है तो लक्ष्य प्राप्त करने के लिए निरन्तर पढ़ना, तो कभी अच्छी-अच्छी किताबों का संग्रह करना, तो कभी पढ़ने के समय को बदलना, पढ़ने के तरीकों में बदलाव लाना इत्यादि प्रयास करना है।

(6) आन्तरिक सन्तुलन (Internal Equillibrium)– प्रेरित व्यवहार में आन्तरिक सन्तुलता पाई जाती है। कैनन (Cannon, 1932) ने इस बात का समर्थन किया है। उनके प्रायोगिक तथ्य बताते हैं कि अभिप्रेरित व्यवहार में सन्तुलन रखने की प्रवृति देखने को मिलती है दैहिक वैज्ञानिकों का यह तथ्य प्रमाणित भी है कि शरीर में कुछ ऐसी रचना है जिसके आधार पर प्राणी सन्तुलन बनाये रखता है। यह व्यवस्थ समस्थान (Homeostasis) के कारण सम्भव होती है।

(7) **प्रबलता** (Strenght) – अभिप्रेरित व्यवहार में बड़ी शक्ति होती है। यह कई मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रमाणित किया जा चुका है लेकिन यह प्रबलता लक्ष्यों की प्रबलता पर निर्भर करती है।

अभिप्रेरण चक्र (Motivation Circle)

प्रेरणा के स्वरूप को समझने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरणा चक्र (Motivational Cycle) के सम्प्रत्यय (Concept) का प्रतिपादन किया है। वास्तव में आवश्यकताएं, अन्तर्नोद, प्रोत्साहन व प्रेरणाएं इस चक्र कम माध्यम से समझी जा सकती हैं। यह तीनों सम्प्रत्यय (Concepts) एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं। वास्तव में तीनों अभिप्रेरण के पक्ष अथवा तत्व हैं।

अन्य शब्दों में ये तीनों आवश्यकताएं, अन्तर्नोद, प्रोत्साहन तथा प्रेरणाएं एक प्रकार से अभिप्रेरण चक्र (Motivational Circle) की तीन अवस्थाएं या पक्ष हैं उनको समझना होगा।

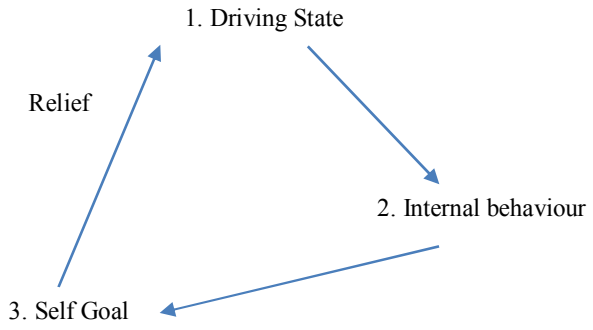

चित्र 1 : अभिप्रेरणा चक्र

अभिप्रेरणा के तीनों पक्षों में भेद किया जा सकता है। ये एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं। अभिप्रेरणात्मक चक्र में प्रत्येक की एक अवस्था होती है, क्योंकि तीनों समस्याएं आपस में जुड़ी

हुई हैं। पहली अवस्था दूसरी को जन्म देती है। दूसरी तीसरी को और तीसरी अवस्था प्रथम को जो कि चित्र से स्पष्ट है।

अभिप्रेरणात्मक चक्र में, प्रथम अवस्था में तीनो प्रत्यय (Concept) आवश्यकता, अन्तर्नोद अथवा प्रेरक, ये प्रत्यय लगभग समानार्थक हैं किन्तु इनका अर्थ पूर्ण रूप से एक नहीं है।

(1) आवश्यकता (Need) – बोरिंग एवं साथियों (Boring et al, 1962) के अनुसार, "आवश्यकता शरीर की जरूरत अथवा अभाव है जिनके बिना प्राणी का जीवन चलना प्रायः कठिन हो जाता है। आवश्यकताओं की असन्तुष्टि से व्यवहार प्रभावित होता है। भोजन, पानी, नींद, आराम आदि कुछ मूल आवश्यकताएं हैं जिनकी पूर्ति आवश्यक है। जब व्यक्ति को भूख लगती है तो स्पष्ट है कि रक्त में शर्कर की मात्र किसी निश्चित स्तर से कम हो जाती है तो पेट में संकुचन होन लगते हैं। यह संकुचन भूख के कारण हुआ। ऐसा भी होता है कि हमारे शरीर में कुछ ऐसे पदार्थ अधिक मात्रा में एकत्रित हो जाते हैं जिनका निष्कासन भी जरूरी है। अतः आवश्यकताओं से तात्पर्य शरीर का तथा अपनी इच्छानुसार दूसरे व्यक्तियों से कार्य करवाने में भी आत्मसन्तष्टि मिलती है। समाज में सभी व्यक्तियों में शक्ति प्रेरक कम या अधिक मात्रा में पाया जाता है। कुछ व्यक्तियों में यह कम होती है व कुछ में बहुत अधिक होती है। शक्ति प्रेरक कई तत्वों पर निर्भर करता है। जैसे व्यक्ति के यौन, सामाजिक स्तर, परिपक्वता का स्तर आदि। कभी-कभी परिस्थितिवश भी शक्ति प्रेरण का विकास होता है। एडलर के अनुसार, परिवार में बालक जब अपने आपको शक्तिहीन अनुभव करता है तो उस बालक में शक्ति प्रेरणा जागृत हो जाती है।

(iv) आक्रमणशीलता की आवश्यकता (Need for Aggresiveness) – कलाइनबर्ग (Clineberg, 1954) ने आक्रामक भावना को सार्वभौमिक बताया है। सामाजिक नियमों की भिन्नता से आक्रामक भावना में भी भिन्नता पाई जाती है। आक्रामक भावना का तात्पर्य व्यक्ति की ऐसी प्रवृति से है जिसमें व्यक्ति की शारीरिक अथवा मानसिक रूप से हानि पहुंचाने के लिए आक्रमण करता है। इसमें शारीरिक शक्ति से लेकर गाली-गलौज भी हो सकती है। एटकिन्सन, एटकिन्सन तथा हिलगार्ड (Atkinson, Atkinson & Hilgard, 1983) ने आक्रमण अभिप्रेरक को परिभाषित करते हुए कहा है कि, "यह वैसा व्यवहार है जिसका उद्देश्य दूसरों को शारीरिक रूप से या शाब्दिक रूप से चोट पहुंचाना या दूसरों की सम्पत्ति को बर्बाद करना होता है।

"Aggression in usually defined as the behaviour that is intended to injure another person (Physically or verbally or to destroy property)". — Atkinson, Atkinson, Smith & Hilgard (1987)

आक्रामक प्रेरक की प्रकृति कई प्रकार से हो सकती है। सक्रिय (Active) निष्क्रिय (Passive) हो सकती है। फ्रायड (Freud) ने आक्रामकता को जन्मजात प्रेरक माना है। फ्रायउ ने दो मूल प्रवृत्तियों में से इस मूल प्रवृत्ति (Death Instinct) माना है।

(v) **अनुमोदक प्रेरक** (Approval Motive) – क्राउनी तथा मारलो (Crowne & Marlow, 1964) ने इस प्रकार के प्रेरक का अध्ययन किया है। उनके परिणाम ये बताते हैं कि जिन व्यक्तियों में यह प्रेरण अधिक पाई जाती है उनमें प्रत्यक्षपरक सुरक्षा (perceptual defense) भी अधिक मात्रा में पाई जाती है तथा ऐसे व्यक्ति समूह के नियमें व आदर्शों के समरूप व्यवहार अधिक करते हैं। अनुमोदन प्रेरक से तात्पर्य है कि व्यक्ति इस प्रकार का अनुभव करता है कि दूसरे व्यक्ति उसके कार्यों, व्यवहारों तथा विचारों को सामाजिक तथा नैतिक दृष्टि से इच्छा समझकर उसका अनुमोदन करें अर्थात् धनात्मक मूल्यांकन (Positive Evaluation) चलता है। यहां धनात्मक मूल्यांकन से तात्पर्य प्रतिष्ठा, प्रशंसा पाने की उम्मीद आदि है। इस प्रकार की प्रेरक अधिक मात्रा में होने से व्यक्ति वही कार्य करता है जो समाज द्वारा मान्य है। इस तरह प्रेरण किशोरों में अधिक पाई जाती है।

प्रेरक के मुख्य सिद्धान्त (Major Approaches or Theories Motivation)

मूल प्रवृत्ति सिद्धान्त (Institution Theories) – विलियम मैक्डूगल (W. McDougall, 1908) के अनुसार "मूल प्रवृत्तियाँ ऐसी आनुवांशिक मनोशारीरिक स्ववृत्ति होती है जो व्यक्ति के प्रत्यक्षीकरण या वस्तओं की श्रेणी की ओर ध्यान देना, संवेगात्मक उत्तेजना महसूस करने और उनके प्रति एक विशेष तरीके से क्रिया करने को निर्धारित करती है।" इनके अनुसार मूल प्रवृत्ति के तीन प्रधान तत्व होते हैं प्रत्यक्षपरक, संवेगात्मक एवं अभिप्रेरणात्मक। इन्हें संज्ञानात्मक, भावनात्मक तथा क्रियात्मक का नाम भी दिया जाता है। इन्हें सामान्य उत्तेजन पहलू (General Emergizing Aspect), क्रिया पहलू (Action Aspect) तथा लक्ष्य निर्देशन पहलू (Goal Direcrted Aspect) भी कहा जाता है।

मैक्डूगल (Mc Dougal) के अनुसार, "कुछ प्रमुख विशेषताएं हैं जो जन्मजात होती हैं। इनमें अनुकूलन की प्रवृत्ति होती है। ये एक जाति के सभी सदस्यों में समान रूप से पाई जाती हैं। यह एक मानसिक क्रिया है जिसमें प्रेरणात्मक व्यवहार के अधिकतर लक्षण मिलते हैं। अर्थात् मैक्डूगल ने मूल प्रवृत्तियों को अभिप्रेरकों (Motive) के रूप में स्वीकारा है। उनके अनुसार मुल प्रवृत्तियां जन्तजात तथा अर्जित होती हैं। ये प्रवृत्तियां व्यवहार को विशिष्ट लक्ष्य (Specific Goals) की ओर अग्रसर करती हैं। इसी सन्दर्भ में विलियम जेम्स ने कहा है कि पशु मूल प्रवृत्ति तथा

मानव मूल प्रवृत्ति दोनों ही उद्देश्यपूर्ण होती हैं जो व्यक्ति को पर्यावरण के साथ समायोजन करने में मदद करती हैं।

इसी संदर्भ में फ्रायड ने बताया कि मूल प्रवृत्ति व्यक्तित्व गतिशीलता का एक प्रमुख स्रोत होती है। ये ऐसी जन्मजात मनोशक्तियां हैं जो जन्मजात होती हैं। ये व्यवहार को संचालित करती हैं। प्रायड के अनुसार ये दो मूल प्रवृत्तियां-जीवन मूल प्रवृत्ति व मृत्यु मूल प्रवृत्ति हैं।

जीवन मूल प्रवृत्ति से तात्पर्य उन प्रवृत्तियों से होता है जिसके सहारे व्यक्ति जीवन की महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं को करने के लिए प्रेरित होता है। मृत्यु मूल प्रवृत्ति व्यक्ति को सभी तरह के विनाशात्मक एवं ध्वंसात्मक व्यवहार को करने की प्रेरणा देता है। प्रायड के अनुसार, दोनों तरह की मूल प्रवृत्तियां एक साथ मिलकर व्यक्ति के व्यवहार को प्रेरित कर सकती हैं।

(2) मैसलो का आवश्यकता-पदानुक्रम सिद्धान्त (Maslow's Need-Hierarchys Theory) – मेसलो ने आवश्यकताओं को अग्रता (Priority) के आधार पर श्रेणीगत किया है। मैसलो (Maslow, 1954) ने बतलाया कि मानव आवश्यकताओं (Human Needs) की व्याख्या एक अनुक्रम (Hierarchy) के रूप में की जा सकती है। उन्होंने बताया कि आवश्यकताएं सर्वाधिक प्रबल होती हैं वे अपनी सन्तुष्टि चाहती हैं। इस प्रकार से व्यवहार को प्रभावित करती हैं मेसलों के अनुसार मानव आवश्यकताएं प्रमुख रूप से पांच हैं जिन्हें हम एक अनुक्रम (Hierarcy) के रूप में दिखला सकते हैं। जब एक वर्ग की आवश्यकता सन्तुष्ट हो जाती है तो उससे उच्च वर्ग की आवश्यकता सन्तुष्टि की मांग करती है। इस प्रकार यह क्रम सोपानों की चोटी तक चलता रहता है। मेसलो द्वारा बताई गई आवश्यकताओं का अनुक्रम चित्र में दर्शाया गया है।

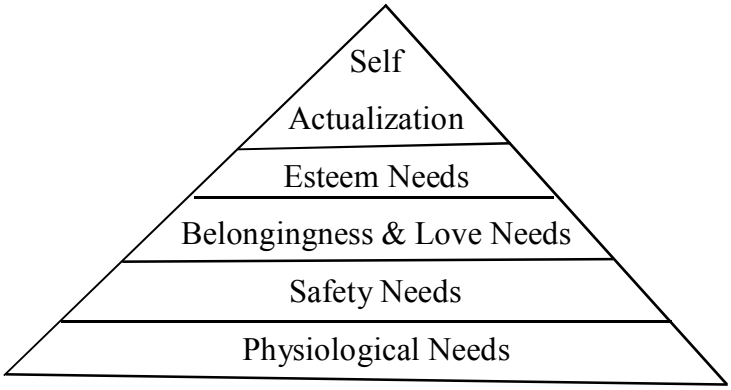

चित्र 2 : मेसलो द्वारा बताई गई आवश्यकताएं

(i) शारीरिक आवश्यकता (Psychological Needs) – मेसलो (Maslow) के अनुसार, व्यक्ति सबसे पहले अपनी शारीरिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि चाहता है। मनुष्य की शारीरिक आवश्यकताएं मेसलो के क्रम में सबसे नीचे आती हैं। इनमें भूख, प्यास, काम व अन्य शारीरिक

आवश्यकताएं सम्मिलित हैं जो प्राणी को जीवित रखने के लिए आवश्यक हैं। अत: व्यक्ति पहले अपने की जीवित रखने वाली आवश्यकताओं की सन्तुष्टि का प्रयत्न करता है बाद में अन्य आवश्यकताओं के बारे में सोचता है।

(ii) **सुरक्षा की आवश्यकता** (Safety Needs) – जब व्यक्ति की शारीरिक आवश्यकताएं पूरी जो जाती है तो इनसे तात्कालिक उच्च आवश्यकताएं उत्पन्न हो जाती हैं। व्यक्ति सुरक्षा की खोज करता है। इस वर्ग की आवश्यकता बच्चों में देखी जा सकती है तथ बड़ों में भविष्य के प्रति सुरक्षा की आवश्यकता महसूस की जाती है।

(iii) **प्रेम व सम्बन्ध** (Need of Belongingness and Love) – इस तरह की आवश्यकता सुरक्षा के बाद भी सन्तुष्टि के बाद उत्पन्न होती है। इस आवश्यकता के फलस्वरूप व्यक्ति विभिन्न समूहों का सदस्य बनकर अपने आपके समूह में से तादात्म्य स्थापित करता है व अपने समूह के अन्य सदस्यों के प्रति स्नेह दिखाता है व साथ ही साथ स्नेह पाने की इच्छा रखता है।

(iv) **सम्मान की आवश्यकता** (Esteem Needs) – मैसलो के अनुसार, जब व्यक्ति उपर्युक्त तीनों आवश्यकताओं की सन्तुष्टि कर लेता है तब उसे दूसरों से सम्मान पाने की आवश्यकता महसूस होती है। इस श्रेणी में आत्म सम्मान (Self Respect), पद (Status), पहचान (Recognition) आदि सम्मिलित हैं जिससे व्यक्ति का व्यवहार प्रभावित होता है।

(v) **आत्मसिद्धि की आवश्यकता** (Need of Self Actualization) – पंचम सीढ़ी अथवा सोपान के अनुसार आत्मसिद्धि है। मैसलो के अनुसार इस पंचम सीढ़ी तक यह जरूरी नहीं है कि सभी व्यक्ति वहां पहुंच जायें। आत्म सिद्धी (Self Actualization) एक जटिल सम्प्रत्यय (Complex Concept) है। मार्गन व उनके साथियें (Morgan et. al., 1986) के अनुसार व्यक्ति की अपनी क्षमताओं को विकसित करने की आवश्यकताओं को आत्मसिद्धि कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, अपनी क्षमताओं के अनुसार कुछ कर सकना ही आत्मसिद्धि है। (Self-actualization refers to an individual's need to develop his or her potentialities, in other words to do what he or she is capable of doing"

मैसलो के इस सिद्धान्त की काफी आलोचना हुई। लेकिन आलोचनाओं के बावजूद मैसलो का आवश्यकता पदानुक्रम सिद्धान्त एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त माना गया है, क्योंकि इनका ही ऐसा सिद्धान्त है जो जैविक (Biological) – व सामाजिक (Social) दोनों ही प्रभावों का समावेश बताता है।

(3) **अन्तर्नोद सिद्धान्त** (Drive Theories) – अन्तर्नोद शब्द का प्रयोग वुडवर्थ तथ फ्रायड ने किया। मनोवैज्ञानिक प्राय: जैविक आवश्यकताओं से उत्पनन अवस्था को अन्तर्नोद कहते हैं। इस स्थिति में प्राणी का व्यवहार काफी क्रियाशील हो जाता है तथा किसी लक्ष्य को और निर्दिष्ट होता है। जिन अन्तर्नोद के कारण व्यक्ति किसी लक्ष्य विशेष को प्राप्त करने का प्रयत्न करता है या उसकी ओर अग्रसर होता है, उसे धनात्मक अन्तर्नोद (Positive Drive) कहते हैं। भूख, प्यास इसी प्रकार के अन्तर्नोद हैं।

जिन अन्तर्नोदों (Drives) के कारण व्यक्ति वस्तु से दूर होने (Avoidance) का प्रयत्न करते हैं, उसे ऋणात्मक अन्तर्नोद कहा जाता है। इसी सन्दर्भ में फ्रायड (Freud) का अभिप्रेरक सिद्धान्त (Motivation Theory) जिसे मनोविश्लेषण सिद्धान्त (Psychoanalytic theory) कहा जाता है। इसके सिद्धान्त अन्तर्नोद (Drive) का अच्छा उदाहरण है।

फायड के विचार से सभी व्यवहार दो प्रकार की विरोधी मूल प्रवृत्तियों का परिणाम हैं ये दो मूल प्रवृत्तियां जीवन मूल प्रवृत्ति (Life Instince), तथा मृत्यु प्रवृत्ति (Death Instinct) हैं। जीवन मूल प्रवृत्ति से व्यक्ति का विकास होता है तथा सभी रचनात्मक (Constructive) कार्यों को वह करता है। मृत्यु मूल प्रवृत्ति से विध्वंसात्मक कार्य (Destructive Work), मारना पीटना आदि कार्य करता है।

(4) **प्रोत्साहन सिद्धान्त** (Incentive Theories) – जैसा कि हम जानते हैं लक्ष्य वह वस्तु है जिसे प्राप्त करने के लिए व्यक्ति व्यवहार करता है। अन्तर्नोद की स्थिति तब तक चलती रहती है जब तक कि उसे लक्ष्य की पूर्ति नहीं हो जाती। कुछ लक्ष्य प्रोत्साहन का रूप धारण कर लेते हैं।

प्रोत्साहन सिद्धान्त के अनुसार प्रेरित व्यवहार में व्यक्ति की अवस्था अर्थात् अन्तर्नोद (Drive) इतना महत्वपूर्ण नही होता जितना कि स्वयं लक्ष्य (Goal) या प्रोत्साहन होता है अर्थात् लक्ष्य (Incentive) ज्यादा महत्वपूर्ण होता है।

ये प्रोत्साहन लक्ष्य (Incentive) दो प्रकार के होते हैं धनात्मक प्रोत्साहन एवं ऋणात्मक प्रोत्साहन। धनात्मक (Positive) में भोजन, पानी आदि को सम्मिलित करते हैं व ऋणात्मक प्रोत्साहन (Negative incentive) जिनसे हम दूर रहना चाहते हैं, जैसे- बिजली का करंट (Shock) आदि।

(5) **अभिप्रेरणा का उद्दोलन सिद्धान्त** (Arousal Theory of Motivation) – प्रत्येक व्यक्ति किसी भी समय शारीरिक तथा मानसिक रूप से किसी सीमा तक सक्रियता उद्वेलित

(Arouse) रहता है डुफी (Duffy, 1957) तथा हेब (Hebb, 1955) के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति के सामने क्रियाशीलता तथा उद्वेलन (Arousal) का एक ऐसा निश्चित स्तर होता है तो व्यक्ति को काफी प्रसन्नता होती है। इसके समर्थक मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि किसी सिद्धान्त के कार्य को भली-भांति निष्पादित करने के लिए सक्रियता (Arousal) एक सवोत्तम स्तर होता है। यदि सक्रियता अाविा उद्वेलक (Arousal) का स्तर उस सीमा से कम या ज्यादा, दोनों ही स्थितियां सही नहीं हैं। यदि सक्रियता अथवा उद्वेलन (Arousal) – का स्तर उस सीमा से कम या ज्यादा, दोनों ही स्थितियों सही नहीं हैं। यदि सक्रियता अथवा उद्वेलन (Arousal) – का स्तर सर्वोत्तम स्तर से कम है तो कार्यों में सक्रियता नहीं रहती और यदि अत्यधिक उत्तेजित अवस्था उत्पन्न होती है तो इस कारण उपयुक्त व्यवहार नहीं घटित होता है।

उपयुक्त सिद्धान्त को चित्र द्वारा दशार्या गया है-

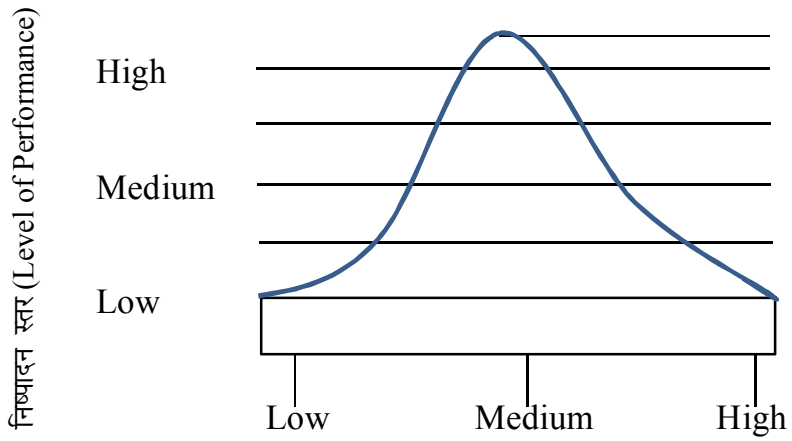

चित्र 3 : उद्वेलन एवं निष्पादन

यदि सक्रियता का स्तर मध्यम व्यक्ति का है तो निष्पादन आकार श्रेष्ठ होता है।

(Performance is often best when arousal is moderate)

कुण्ठा तथा प्रेरकों का संघर्ष (Frustation and Conflict of Motives)

जब व्यक्ति किसी व्यकित वांछित लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करता है परन्तु कुछ बाधाएं उस लक्ष्य की ओर उसके प्रयासों को विफल कर देती हैं। दूसरे शब्दों में जैसा कि हम जानते हैं कि प्रत्येक प्रेरित व्यवहार (Motivated Behaviour) में एक निश्चित लक्ष्य होता है।

जब यह लक्ष्य किसी बाधा से बाधित हो जाता है और व्यक्ति अपने लक्ष्य पर नहीं पहुंच पाता है तो इससे ऐसे स्थिति उत्पन्न होती है जिसक कुण्ठ (Frustration) कहते हैं।

मान लिजिए आप परीक्षा देने जा रहे हैं और लेट हो रहे हैं, उसी समय आपकी गाड़ी पंचर हो जाती है। तो इस तरह कुण्ठा की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। यहां हमारा लक्ष्य परीक्षा हाल में समय पर पहुंचना होती है और गाड़ी पंचर होना लक्ष्य में बाधा होना, लक्ष्य अवरुद्ध हो जाने आदि से कुण्ठा की स्थिति पैदा हो जाती है।

कुण्ठा के कई कारण हो सकते हैं। मार्गन के अनुसार, मुख्यत: कुण्ठा के प्रमुख तीन स्रोत हो सकते हैं–

(1) पर्यावरण से सम्बन्धित कारक (Factors Related to Environment)

(2) व्यक्तिगत कुण्ठा (Personal Frustration)

इसी तरह कई और मनोवैज्ञानिकों ने भी अभिप्रेरणा को परिभाषित करने की कोशिश की है। कई परिभाषाओं के आधार पर अभिप्रेरणा के स्वरूप को कुछ इस तरह समझा जा सकता है–

(1) अभिप्रेरणा व्यक्ति के आन्तरिक अवस्था को कहा जाता है। यह शारीरिक या मानसिक हो सकती है।

(2) यह अवस्था व्यक्ति में कुछ क्रियाएं करा देती है यानि व्यति को सक्रिय बना डालती है।

(3) यह सब क्रियाएं व्यक्ति एक निश्चित लक्ष्य (goal) को प्राप्त करने की दिशा में करता है अर्थात् सभी क्रियाएं एक खास दिशा में होती है।

(4) यह सभी क्रियाएं लक्ष्य की प्राप्ति तक बनी रहती है।

इस पूरी प्रक्रिया को आप इस प्रकार समझ सकते हैं। जैसे यदि आपको प्यास लगी है तो आप पानी ढूंढ़ते हैं और पानी पीकर अपनी प्यास बुझाते हैं। इस उदाहरण में प्यास एक आन्तरिक शारीरिक अवस्था है। यह अवस्था आपमें कुछ क्रियाएं उत्पन्न करा डालता है, जैसे - पानी के लिए नल ढूंढ़ना, पानी का बोतल ढूंढ़ना आदि। यह सब क्रियाएं प्यास बुझाने की दिशा में की जा रही है तथा तब तक बनी रहती है जब तक प्यास बुझ न जाए।

1.3 आवश्यकता, प्रणोदन एवं प्रोत्साहन का अर्थ (Meaning of Need, Drive and Incentive)

उपरोक्त वर्णित अभिप्रेरणा की पूरी प्रक्रिया में मनोवैज्ञानिकों ने तीन तत्वों को महत्वपूर्ण माना है, जो है – आवश्यकता, प्रणोदन एवं प्रोत्साहन।

(1) **आवश्यकता** (Need) – जब व्यक्ति में किसी चीज की कमी होती है या असंतुलन उत्पन्न होता है तो उस चीज की या असंतुलन दूर करने की जरूरत होने लगती है जिसे आवश्यकता (Need) कहते हैं। जैसे, जब शरीर की कोशिकाओं में पानी की कमी होती है तब प्यास लगने लगती है और पानी की आवश्यकता महसूस होने लगती है। इस तरह की आवश्यकता को उत्तक आवश्यकता (Tissue Need) कहा जाता है। इसी तरह कुछ पदार्थ का जब शरीर में आधिक्य हो जाता है तो उसे निकालने की आवश्यकता आ जाती है जैसे–मलमूत्र आदि। इस तरह की आवश्यकता हो निष्कासन आवश्यकता (Eliminate) कहते हैं।

आवश्यकताओं को एक अन्य आधार पर भी बांटा जाता है – जीवनरक्षक आवश्यकता या अनिवार्य और द्वितीय या गैर–अनिवार्य आवश्यकता। कुछ आवश्यकताएं ऐसी होती है जो जीवन की रक्षा करती है जैसे–भूख, प्यास, नींद आदि। ये 'जीवन रक्षक आवश्यकताएं या प्राथमिक आवश्यकताएं कहलाती है। जबकि कुछ आवश्यकताएं ऐसी होती हैं जो समाज में अच्छी तरह से जीवन–यापन से संबंधित नहीं होती है, ये गैर अनिवार्य आवश्यकताएं कहलाती है।

आवश्यकता चाहे किसी भी तरह की हो पर यह अभिप्रेरणात्मक चक्र (motivational cycle) का प्रथम चरण कहलाती हैं क्योंकि आवश्यकता के उत्पन्न होने पर अभिप्रेरण प्रारम्भ होता है।

(2) **प्रणोदन** (Drive) – जब व्यक्ति में किसी चीज की आवश्यकता होती है तो उस आवश्यकता को पूरा करने के लिए विशेष रूप से उत्तेजित होता है जिसे प्रणोदन (Drive) कहते हैं। यह अवस्था उसमें निश्चित क्रिया उत्पन्न कराता है तथा एक निश्चित दिशा भी प्रदान करता है। जैसे – शरीर में पानी की कमी होने पर प्यास लगती है तो शरीर एक विशेष रूप से उत्तेजित होता है फलतः व्यक्ति में उस कमी के को पूरा करने की दिशा में कार्य उत्पन्न करा डालता है और व्यक्ति पानी ढूंढ़ने की क्रिया करने लगता है।

(3) प्रोत्साहन (Incentive) – साधारणतः प्रोत्साहन बाह्य वस्तु (external object) है जिसकी प्राप्ति से आवश्यकता की पूर्ति होती है तथा प्रणोदन में कमी आती है। यह व्यक्ति या प्राणी के आकर्षित भी करता है। जैसे–प्यासा व्यक्ति पानी की ओर जाएगा तथा प्यास बुझाएगा जबकि भूखा व्यक्ति भोजन की ओर जाएगा और भोजन प्राप्त कर अपनी आवश्यकता पूरी करेगा। प्रोत्साहन को लक्ष्य भी कहा जाता है। अतः अभिप्रेरित प्राणी अपने लक्ष्य तक पहुंचने की चेष्टा करता है साथ ही, यह भी स्पष्ट है कि एक विशेष आवश्यकता की पूर्ति एक निश्चित प्रोत्साहन द्वारा ही होता है। जैसे प्यासे व्यक्ति का लक्ष्य या प्रोत्साहन पानी ही होगा न कि भोजन।

प्रोत्सान दो तरह का होता है– धनात्मक और ऋणात्मक (Postive and Negative)।

(i) **धनात्मक प्रोत्साहन** (Positive and Negative) – धनात्मक प्रोत्साहन वह प्रोत्साहन है जिसे प्राणी प्राप्त करने की कोशिश करता है जैसा भूखा व्यक्ति भोजन प्राप्त करना चाहता है।

(ii) ऋणात्मक प्रोत्साहन (Negative Incentive) – ऋणात्मक प्रोत्साहन या लक्ष्य वह है जिससे व्यक्ति ज्यादा से ज्यादा दूर जाना चाहता है। जैसे- दु:खद या खतरनाक परिस्थिति से प्राणी बचना चाहता है।

मनुष्य या प्राणी में अभिप्रेरणा की पहली स्थिति आवश्यकता से उत्पन्न होती है। आवश्यकता से ही शरीर में एक विशेष (Drive) उत्पन्न हो जाता है जो उसमें क्रियाएं उत्पन्न कराता है और ये क्रियाएं लक्ष्य प्राप्त होने तक जारी रहती है।

1.4 अभिप्रेरित व्यवहार का संप्रत्यय (Concept of Motivated Behaviour)

अब आप ऐसा अनुभव कर रहे होंगे कि अभिप्रेरणा की बात तो समझ मे आ गई पर प्रश्न उठता है कि किस व्यवहार को अभिप्रेरित व्यवहार कहा जाए और किसे नहीं। तो पाइए इसके लिए हम अभिप्रेरित व्यवहार के कसौटियों की चर्चा कर लें।

अभिप्रेरित व्यवहार की पहचान के लिए विटेकर (Whittaker, 1970) तथा लिंडजे, हाल और थाम्पसन (Lindzey, Hall and Thompson, 1978) ने अभिप्रेरित व्यवहार को कसौटियों की चर्चा की है जो निम्नलिखित हैं-

(1) चक्रीय (Cyclical) – अभिप्रेरित व्यवहार की पहली कसौटी चक्रीय होना है। व्यक्ति में आवश्यकता उत्पन्न होती है जिससे प्रणोदन (Drive) उत्पन्न हो जाता है। फलत: सम्बन्धित क्षेत्र में व्यक्ति की क्रियाशीलता बढ़ जाती और यह क्रियाशीलता लक्ष्य प्राप्ति तक हीं रहती है लक्ष्य प्राप्त होती ही आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है और प्रणोदन घट जाता हे। इस निश्चित क्रम से ही अभिप्रेरित व्यवहार होता रहता है। जब दुबारा अभिप्रेरित व्यवहार उत्पन्न होता है तो इसी क्रम में पुंन: आगे बढ़ता है। जैसे, यदि एक बार भूख लगती है तो व्यक्ति भोजन की तलाश करने लगता है। भोजन पाते ही लक्ष्य प्राप्ति हो जाती है। पुन: जब भूख लगती है तो यह प्रक्रिया दुहरायी जाती है।

(2) **चयनात्मक** (Selective) – अभिप्रेरित व्यवहार चयनात्मक होता है अर्थात् यह व्यवहार एक निश्चित दिशा में होता है जैसे यदि व्यक्ति प्यासा है तो सिर्फ प्यास बुझाने के लिए अग्रसर होगा, भोजन की ओर आकर्षित नहीं होगा।

(3) **सक्रिय एवं सतत** (Active and continuous) – अभिप्रेरित व्यवहार का तीसरा मापदण्ड सक्रिय और सतत, होना है। प्रणोदन की अवस्था जैसे-जैसे बढ़ती है व्यक्ति में क्रियाशीलता भी बढ़ जाती है, पर बहुत देर तक वंचन (Deprivation) की स्थित रहने पर क्रियाशीलता में थोड़ी कमी देखी गई है। लेकिन फिर भी परेशानियों के बाद भी प्राणी सतत् अपने लक्ष्य की प्राप्ति में लगा रहता है। उदाहरण के लिए, भूख की अवस्था में व्यक्ति भोजन प्राप्त करने के लिए सक्रिय हो जाता है। लेकिन यदि ज्यादा देर तक वह भूखा रहता है तो उसकी क्रियाशीलता में थोड़ी कमी आ जाती है। बावजूद इसके वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति यानि भोजन की प्राप्ति में लगा रहता है।

(4) समस्थिति लाना (To maintain Homeostatis) – प्राणी के शरीर की आन्तरिक स्थिति संतुलित रहती है जिसे समस्थिति (Homeostasis) कहा जाता है। कभी इस समस्थिति में लाने की आवश्यकता उत्पन्न हो जाती है और अभिप्ररित व्यवहार द्वारा समस्थिति में प्राणी आने की चेष्टा करता है। जैसे, प्यास की स्थिति में प्राणी के शरीर की समस्थिति असंतुलित हो जाती है। फलतः इस असंतुलित अवस्था में अभिप्रेरित व्यवहार द्वारा पुनः संतुलन लाया जाता है। प्राणी पानी की खोज करके और पानी पीकर आन्तरिक शारीरिक असंतुलन दूर करता है। अतः अभिप्रेरित व्यवहार की यह कसौटी है कि उसमें समस्थिति लाने का गुण होता है।

इस प्रकार अभिप्रेरित व्यवहार की उपर्युक्त कसौटियां या विशेषताएं हैं और इसी आधार पर हम अभिप्रेरित व्यवहार की पहचान कर पाते हैं।

1.5 अभिप्रेरणा के सिद्धान्त (Theories of Motivation)

अब प्रश्न यह उठता है कि प्रेरणा क्या है? इसकी उत्पत्ति कैसे होती है? इन सभी प्रश्नों के उत्तर में मनोवैज्ञानिकों ने प्रेरणा के कई सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं-

(1) प्रणोदन सिद्धान्त (Drive Theory)

(2) आवश्यकता वदानुक्रम सिद्धान्त (Need Hierarcy Theory)

1.5.1 प्रणोदन सिद्धान्त (Drive Theory)

प्रणोदन सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित है कि जैविक प्रेरकों (Biogenic Motives) जैसे, भूख, प्यास, अत्यधिक ठंड या गर्म आदि व्यक्ति के सभस्थिति (Homeostasis) को असंतुलित कर देती है और साथ ही ये स्थितियां दुःखद भी होती हैं। फलतः एक विशेष अवस्था

प्रणोदन (Drive) की स्थिति में आ जाता है, जो उसमें अनेक क्रियाओं को उत्पन्न करता है। इससे पुनः समस्थिति आ जाती है और दुःखद स्थितियां दूर हो जाती है।

इस सिद्धान्त की मुख्य विशेषता यह है कि जैसे ही प्राणी में प्रणोदन उत्पन्नन होता है, वह काफी क्रियाशील हो जाता है। उसके सारे व्यवहार उद्देश्यपूर्ण (goal-directed) हो जाते हैं। एक निश्चित लक्ष्य तक पहुंचने के लिए वह सारी क्रियाएं सम्पन्न करता है इस तरह, एक निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रणोदन प्राणी को आगे बढ़ाता है या धक्का देता है इसलिए कुछ मनोवैज्ञानिकों ने इसे धक्का सिद्धान्त (Push Theory) भी कहा जाता है।

जब प्राणी लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है तो उसमें प्रणोदन की तीव्रता (Intensity) कम हो जाती है। लेकिन कुछ समय बाद पुनः उसमें प्रणोदन की अवस्था आ जाती है और वह पुनः क्रियाशील हो उठता है। जैसे एक बार भूख की तृप्ति भोजन से हो जाती है लेकिन कुछ समय बाद व्यक्ति को पुनः भूख लगती है। प्राणी की जिन क्रियाओं से प्रणोदन दूर होता है उसे वह बार-बार दुहराता है जिससे वह क्रिया सबल हो जाती है। जबकि वे क्रियाएं जिनसे प्रणोदन दूर नहीं होता, उसे वह नहीं दुहराता है फलतः वैसी क्रियाएं कमजोर पड़ जाती है और पुनः प्रणोदन उत्पन्न होने पर दुहरायी नहीं जाती है।

इस तरह आप देखते हैं कि प्रणोदन सिद्धान्त में अभिप्रेरण की व्याख्या एक विशेष क्रम (sequence) में किया गया है। यह क्रम निम्न रूप से स्पष्ट है-

(1) प्रणोदन एक अवस्था है जिसकी उत्पत्ति शारीरिक आवश्यकता या बाह्य उद्दीपक (Extraneous stimulus) से उत्पन्न होता है।

(2) इस अवस्था में प्राणी के व्यवहार लक्ष्य की ओर उन्मुख (goal directed) होते हैं।

(3) यह लक्ष्य निर्देशित व्यवहार (goal directed behaviour) प्राणी को लक्ष्य की प्राप्ति कराते हैं।

(4) लक्ष्य की प्राप्ति के फलस्वरूप प्राणी में प्रणोदन (Drive) की कमी हो जाती है तथा संतुष्टि प्राप्त होती है।

मूल्यांकन (Evaluation) –

इस सिद्धान्त के कुछ विशेष गुण निम्न रूप से हैं।

(i) यह सिद्धान्त प्रेरणा की व्याख्या मौलिक रूप में करने का प्रयास करता है।

(ii) यह सिद्धान्त पशुओं के प्रेरणात्मक या अभिप्रेरक व्यवहार की व्याख्या करता है।

(iii) मानव प्रेरकों-जैसे-उपलब्धि आवश्यकता (Need for achievement), संबंधन आवश्यकता (Need for Affiliation), सामाजिक शक्ति (Social Power) आदि की व्याख्या भी इस सिद्धान्त द्वारा की जा सकती है।

आलोचनाएं (Criticisms) – इस सिद्धान्त के कुछ दोष एवं सीमाएं भी है जो निम्न रूप में हैं-

(i) प्रणोदन सिद्धान्त की यह मान्यता है कि यदि अनुकूल व्यवहार व्यक्ति करता है तो प्रणोदन घट जाता है। लेकिन कई स्थितियों में यह देखा गया है कि अभिप्रेरित व्यवहार करने से प्रणोदन और बढ़ता है।

(ii) कुछ मनोवैज्ञानिक (BArfon, 2003) यह मानते हैं कि मानव प्रेरणा की व्याख्या करने में यह सिद्धान्त सक्षम नहीं है।

उपरोक्त आलोचनाओं के बावजूद यह स्पष्ट है कि यह सिद्धान्त जैविक अभिप्रेरकों (Biological motivation) की व्याख्या में काफ हद तक सफल है।

1.5.2 आवश्यकता-पदानुक्रम सिद्धान्त (Need Hicrarchy Theory)

मैसलो (Maslow) ने अभिप्रेरक का वैज्ञानिक अध्ययन कर इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। इनके अनुसार मानव अभिप्रेरक या आवश्यकताएं एक अनुक्रम (Hicrarchy) के रूप में होते हैं, एक के पूरा किये जाने पर ही दूसरे की बारी आती है। शारीरीक सुरक्षा तथा सामाजिक आवश्यकताओं को मैसलो ने अपूर्णत आवश्यकता (deficiency needs) कहा जाता है जबकि उच्च स्तरीय आवश्यकताओं को विकास आवश्यकता (growth needs) कहा है।

मैसलो के अनुसार मानव आवश्यकताएं मुख्य रूप से पांच है जिसमें एक निश्चित क्रम है। इसे निम्न चित्र द्वारा समझा जा सकता है -
गया है।

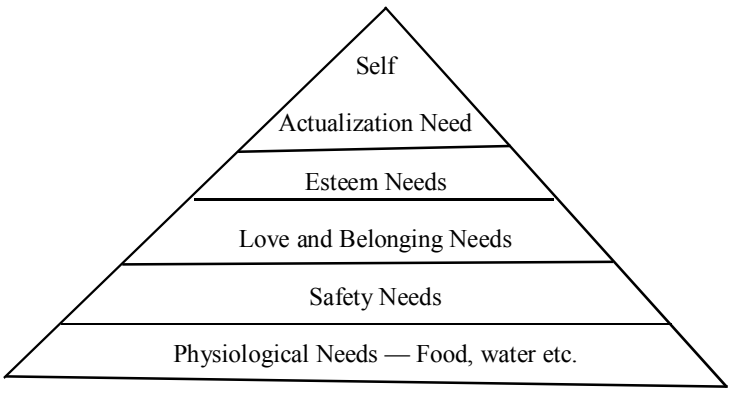

जैसा कि चित्र मे आप देख रहे हैं मानव अभिप्रेरण या आवश्यकताएं एक क्रम में होता है जिसमें सबसे नीचे शारीरिक आवश्यकताएं हैं और सबसे ऊपर आत्मसिद्धि की आवश्यकता। आइए! टब हम इन्हें समझ लें-

(1) **शारीरिक आवश्यकताएं** (Physiological Needs) – मैसलो के अनुसार सबसे पहले व्यक्ति अपनी शारीरिक आवश्यकताओं को संतुष्ट करने की कोशिश करता है क्योंकि इनके बिना वह जिन्दा नहीं रह पाएगा। इन आवश्यकताओं में मुख्य रूप से भूख, प्यास, नींद, काम (sex) आदि आते हैं।

(2) **सुरक्षा की आवश्यकता** (Safety Needs) – शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाने पर व्यक्ति अपनी सुरक्षा की आवश्यकता की पूर्ति करता है। इसमें वह शारीरिक एवं सांवेगिक दुर्घटनाओं से अपने आप को बचाने की कोशिश करता है।

(3) **सदस्य होने तथा स्नेह की आवश्यकता** (Need to belong and to love) – उपरोक्त वर्णित दोनों आवश्यकता की पूर्ति होने पर व्यक्ति समूह-परिवार, समाज, स्कूल, धर्म, जाति, प्रजाति आदि से तादात्म्य (Identification) स्थापित करने की कोशिश करता है। साथ ही प्यार पाने और प्यार देने की आवश्यकता भी उसमें उत्पन्न होती है।

(4) **सम्मान की आवश्यकता** (Esteem Needs) – उपरोक्त सभी आवश्यकताओं की संतुष्टि के बाद व्यक्ति में सम्मान के आवश्यकता की उत्पत्ति होती है। इस आवश्यकता में आत्म-सम्मान (self respect), उपलब्धि (achievement) पद (status), पहचान (recognition) आदि सम्मिलित रहते हैं।

(5) **आत्मसिद्धि की आवश्यकता** (Need for self actualization) – यह आवश्यकता पदानुक्रम में सबसे उपरी स्तर की आवश्यकता है। इस तक सभी व्यक्ति नहीं पहुंच पाते हैं। आत्मसिद्धि का अर्थ अपने अन्दर छिपे क्षमताओं की पहचान करन तथा उसे ठीक ढंग से विकसित करन। जो व्यक्ति आत्मसिद्धि की आवश्यकता को संतुष्ट करते हैं वे अपने व्यक्तिगत विकास (Personal Growth) से काफी संतुष्ट होते हैं।

इस तरह मैसलो ने बताया कि व्यक्ति पहले अपनी निम्न स्तर पर आवश्यकताएं-शारीरिक आवश्यकता एवं सुरक्षा की संतुष्टि करता है तब उच्च स्तर की आवश्यकताएं (upper level need) – (बाकी तीन) की संतुष्टि करता है। यद्यपि कि मैसलो का यह सिद्धान्त काफी सराहा गया तथापि इसकी कई आलोचनाएं भी की गई हैं -

आलोचनाऐं (Criticisms) – मैसलो के सिद्धान्त की कुछ सीमाएं या दोष निम्न रूप में है।

(1) इस सिद्धान्त की यह मान्यता है कि निम्न स्तरीय आवश्यकताओं की संतुष्टि के बाद उच्च-स्तरीय आवश्यकताएं उत्पन्न हो जाती है। लेकिन आलोचकों का कहना है कि यह जरूरी नही है। सभी व्यकित में निम्न स्तरीय आवश्यकताओं की संतुष्टि के बाद उच्च स्तरीय आवश्यकता उत्पन्न नहीं होती हैं।

(2) आलोचकों का यह भी कहना है कि सभी व्यक्ति में आत्म-सिद्धि की आवश्यकता उत्पन्न नहीं होती है।

(3) आलोचकों का यह भी कहना है कि आवश्यकता-पदानुक्रम जैसी कोई बात नहीं है। हर समाज में यह अलग-अलग रूप में होता है।

इन आलोचनाओं के बावजूद भी मैसलो का सिद्धान्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त माना गया है।

1.6 आन्तरिक एवं बाह्य अभिप्रेरण (Intrinsic and Extrinsic Motivation)

अब तक आपने पढ़ा कि अभिप्रेरण किसे कहते हैं? इसकी उत्पत्ति कैसे होती है? आदि। आइए! अब हम बातं करेंगे दो प्रमुख प्रकार के अभिप्रेरण की। हाल के वर्षों में आन्तरिक अभिप्रेरण और बाह्य अभिप्रेरण के महत्व को देखते हुए मनोवैज्ञानिकों ने इस पर काफी शोध किये हैं। ये दोनों प्रकार के अभिप्रेरक व्यक्ति के क्रियाकलाप, निष्पादन आदि को प्रभावत करते हैं।

1.6.1 आन्तरिक अभिप्रेरण (Intrinsic Motivation)

व्यक्ति किसी कार्य को अपनी खुशी मात्र के लिए करता है या उसमें उसकी अभिरूचि होती है तो यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति में उस कार्य के लिए आन्तरिक अभ्रिपेरणा है जैसे, यदि आप पेंटिंग करते हैं या बागवानी करते हैं। जिसके लिए आपको कोई बाह्य पुरस्कार नहीं मिलता है। लेकिन कार्यों द्वारा आप स्वयं खुश होते हैं या तो कार्य आपको संतुष्टि प्रदान करते है तो यह कहा जा सकता है कि इन कार्यों के लिए आप आन्तरिक रूप से अभिप्रेरित है।

इस तरह, आन्तरिक अभिप्रेरण वैसे कारकों पर आधारित होता है जो आन्तरिक होते है। यानि व्यक्ति में पाये जाते है। रेबर तथा रेबर (Reber and Reber, 2001) के शब्दों में- "आन्तरिक अभिप्रेरणा सामन्यत: संतुष्टि तथा सम्पादन के भावों से उत्पन्न होता है, न कि

बाह्य पुरस्कारों से INTRINSIC motivation usually derives from feeling of satisfaction and fulfilment, not from external rewards.)"

अत: आन्तरिक अभिप्रेरित व्यवहार या क्रियाओं में व्यक्ति बााह्य पुरस्कार की अपेक्षा नहीं करता है, बल्कि ये व्यवहार स्वत: पुरस्कार और संतुष्टि देने वाली होती है। आन्तरिक अभिप्रेरित व्यवहार पर यदि बाह्य पुरस्कार दिया जाता है तो अध्ययनों में यह देखा गया है कि ऐसी स्थिति में आन्तरिक अभ्रिपेरण कमजोर पड़ जाता है (Deci, 1975, Lepper and Green, 1978)। लेकिन अध्ययनों में यह भी देखा गया है कि जब बाह्य पुरस्कार को व्यक्ति घूस या रिश्वत न समझकर अपनी प्रशंसा या मान्यता समझता है तो आन्तरिक प्रेरणा कमजोर नहीं पड़ती बल्कि सबल हो जाती है (Resenfield, folger and Adelman, 1980)।

1.6.2 बाह्य अभिप्रेरणा (Extrinsic Motivation)

बह्य अभिप्रेरण वह है जिसमें उत्पन्न व्यवहार बाहरी पुरस्कार पाने या दण्ड से बचने के लिए किया जाता है। जैसे, अभी आप पढ़ाई कर रहे है, इसका संबंध आपके परीक्षा में आने वाले श्रेणी या अंक से होता है। यानि यह बाह्य रूप से पुरस्कृत व्यवहार है। यद्यपि कि इसमें आपको आन्तरिक खुशी और संतोष भी होता है। अत: बाह्य अभिप्रेरण को उत्पन्न करने का कारक व्यक्ति के भीतर न होकर बाह्य वातावरण में होता है। मुख्य रूप से इसका संबंध पुरस्कार (reward), वेतन (Pay), श्रेणी (grade) पद प्राप्ति (status) आदि से होता है।

रेबर एवं रेबर (Reber and Reber, 2001) के शब्दों में "बाह्य अभिप्रेरण का तात्पर्य उस प्रेरणा से है जो व्यक्ति से बाहर घटित होने वाले कारकों से उत्पन्न होती है (extrinsic motivation refers to the motivation that originates in factor out side the individual)"

अत: स्पष्ट है कि कुछ व्यवहार बाहरी शक्ति (External forces) द्वारा निर्धारित होता है। ऐसे व्यवहार के पीछे अभिप्रेरण काम करता है। जैसे, कोई खिलाड़ी धनोपार्जन के उद्देश्य से खेल में कड़ी मेहनत करता है ताकि वह खेल में सफल हो सके और धन जमा कर सके।

इस तरह स्पष्ट है कि व्यक्ति का कुछ अभिप्रेरित व्यवहार बाह्य तथा कुछ आन्तरिक रूप से पुरस्कृत या संतोष देना वाला होता है।

1.7 जैगार्निक प्रभाव (Zeigarnik Effect)

मानव अभिप्रेरण (human motivation) के अध्ययन के क्षेत्र में मेमं जिन मनोवैज्ञानिकों का नाम आता है, उनमें कर्ट लेविन (Kurt Lewin) का नाम सबसे अधिक मशहूर हैं। इन्होंने

बर्लिन (Berlin) विश्वविद्यालय के प्रयोगशाला में बहुत सारे प्रयोग किये और मानव अभिप्रेरणा (human motivation) के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण बातें बतलाएं। इनका कहना था कि जब व्यक्ति में किसी काम को करने की आवश्यकता (need) उत्पन्न होती है, तो इसके साथ ही उनमें एक तनाव (tension) उत्पन्न हा जाता है। जब व्यक्ति अपने लक्ष्य (goal) पर पहुंच जाता है यानी उस कार्य को पूरा कर लेता है तो उसमें तनाव भी खत्म हो जाता है धीरे-धीरे व्यक्ति में उस काम से सम्बन्धित स्मृति-चिन्ह (memory traces) भी समाप्त होने लगते हैं। फलत: व्यक्ति उसे भूल जाता है। दूसरे तरफ जब व्यक्ति किसी कारणवश उस कार्य को पूरा नहीं कर पाता है, अर्थात् वह कार्य अधूरा ही रहा जाता है, तो व्यक्ति में तनाव बना का बना रह जाता है और उसमें उस कार्य से सम्बन्धित स्मृति-चिन्ह भी क्षीण हाने के बजाय ताजा बने रहते हैं। फलत: व्यक्ति उस कार्य को भूलता नहीं है। लेविन के इस विचारधारा को आवश्यकता-तनाव सिद्धान्त (need-tension theory) कहा जाता है।

बर्लिन विश्वविद्यालय के मनो विज्ञान विभाग के प्रयोगशाला में लेविन के आवश्यकता-तनाव सिद्धान्त की जांच करने के लिए अनेकों मनोवैज्ञानिकों के कई प्रयोग किय। इन मनोवैज्ञानिकों में सबसे अधिक प्रसिद्ध लेविन की शिष्या ब्लूमा जैगारिक (Bluma Zeigarnik, 1927) को मिली। वह अपने प्रयोज्यों (Subjects, N = 32) को 20 भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्य करने को दी। इसमें 10 कार्य को पूरा होने दिया गया तथा बाकी 10 कार्य को बीच में ही रोक दिया गया। अर्थात् प्रयोज्य इस 10 कार्य को पूर्णरूपेण समाप्त (complete) नहीं कर पाये। इसके बाद प्रयोज्यों से इस 20 कार्य में जिना का पुन: स्मरण (recall) कर सकते है। करने का कहा गया। परिणाम में देखा गया कि प्रयोज्यों द्वारा औसत रूप से आधा कार्यों का ही प्रत्यह्वान (recall) हो पाया। इस प्रत्याह्वान में से 68% प्रत्याह्वान अधूरा कार्यों (uncomplete tasks) से था तथा मात्रा 43% प्रत्याह्वान पूरा किये गये कार्य का प्रत्याह्वान की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ था। (uncompleted tasks were better recalled than completed tasks.)। जैगारिक ने इस तरह के प्रभाव (effect) को जैगारनिक प्रभाव (Zeigarnik effect) की संज्ञा दी। जैगारनिक ने अपने प्रयोग में यह भी देखा कि U/C अनुपात (uncomplete/complete ratio) प्रत्येक प्रयोज्य के लिए 68/43 नहीं। था कुछ ऐसे भी प्रयोज्य थ जिनमें अधूरा कार्य (uncomplete tasks) का प्रत्याह्वान का प्रतिशत 68 से कम था। फिर भी अधिकतर प्रयोज्य ऐसे ही थे जिनमें U का प्रतिशत C के प्रतिशत से अधिक था।

जैगारिक प्रभाव से कर्ट लेविन के आवश्यकता-तनाव सिद्धान्त (need-tension theory) को स्प्ष्ट समर्थन मिलता है। प्रयोज्य अधूरा कार्य का प्रत्यह्वान अधिक इसलिए कर पाता है कि

क्योंकि कार्य अधूरा रह जाने से व्यक्ति में तनाव का बना रहता है। फलस्वरूप, व्यक्ति में उस कार्य से सम्बन्धित स्मृति-चिन्ह (memory traces) क्षीण न होकर तरो-ताजा बने रहते हैं।

जैगारनिक प्रभाव (Zerigarnik effect) की सत्याता की जांच करने के लिए बहुत से मनोवैज्ञानिक ने जैसे औभसियानकिता (Ovsiankina, 1928), कारस्टने (Karsten, 1928), लेनर (Lessner, 1933), मैरो (Marrow, 1938) ने कई प्रयोग किये और इन लोगों ने जैगारनिक प्रभाव को सही ठहराया। परन्तु इन लोगों ने कुछ वैसे कारकों (factors) का भी वर्णन किया जिनसे जैगारनिक अनुपात (Zeigarnik ratio) प्रभावित होता है। कुछ वैसे कारक निन्नांकित हैं-

1. प्रत्येक कार्य ऐसा होना चाहिए कि उसका लक्ष्य (goal) प्रयोज्य (subject) के लिए स्पष्ट हो ताकि प्रयोगकर्त्ता द्वारा बीच में रुकने के लिए कहने से वह स्पष्ट रूप से समझ जाय कि अभी वह लक्ष्य पर पहुंचा नहीं था। उदहारणस्वरूप यदि O,D,G,H से शब्द बनाने का कार्य प्रायोज्य को दिया गया है तो प्रयोगकर्त्ता द्वारा यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि इन अक्षरों से उसे तीन या चार शब्द ही (यानी निश्चित संख्या में) बनाना है।

2. प्रत्येक कार्य को समाप्त करने की समय सीमा करीब-करीब बराबर होनी चाहिए अन्यथा जिस कार्य के लिए अधिक समय दिया जाएगा, स्वभावतः उसका प्रत्याह्वान (recall) अधिक अच्छा होगा।

3. कार्य की संख्या ऐसी होनी चाहिए कि उसमें से प्रयोज्य करीब-करीब आधे का प्रत्याह्वान अवश्य कर सके। इसका मतलब यह हुआ कि कार्य की संख्या बहुत कम या बहुत अधिक नहीं होना चाहिए। बहुत कम होने से संभव है कि प्रयोज्य उन सभी का प्रत्याह्वान कर ले और अधिक होने से संभवतः वह उसके आधे का भी प्रत्याह्मान न कर पाये। हाल, लिण्डजे तथा थॉम्सन (Hall, Lindzey & Thompson, 1978) ने यह बतलाया कि जैगारनिक प्रभाव स्पष्ट रूप से होने के लिए कार्यों की संख्या 20-30 के बीच होनी चाहिए।

4. प्रयोज्य को पहल से यह पता नहीं होना चाहिए कि उसे इन कार्यों का आगे चलकर प्रत्याह्वान (recall) करना है, नहीं तो वे मन-ही मन उसे दोहराते रहेंगे और जैगारनिक प्रभाव बहुत स्पष्ट नहीं हो पायेगा।

5. यदि सामूहिक प्रयोग (group experiment) किया जा रहा हो, तो वैसे कार्य आधे प्रयोज्यों (half of the subject) ने पूरा कर लिया है, बाकी आधे प्रयोज्यों द्वारा उन्हें कार्यों को अधूरा (uncomplete) रखा जाना चाहिए। ऐसा नहीं करने से सम्भव है कि आसान कार्य (easier

tasks) कुछ प्रयोज्य को करने को मिल जाय तथा कुछ प्रयोज्य की कठिन कार्य करने को मिल जाय। ऐसाी अवस्था में जैगारिक प्रभाव स्पष्ट नहीं होगा।

6. प्रयोज्य द्वारा कार्य समाप्त होने पर उसका प्रत्याह्वान 24 घंटा के भीतर किया जाना चाहिए। ऐसा नहीं करने से अधूरा कार्य द्वारा उत्पन्न तनाव धीरे-धीरे कम होना प्रारभ हो जाता है और ऐसा सम्भव है कि फिर जैगारनिक प्रभाव (Zeigarnik effect) स्पष्ट रूप से देखने को न मिले।

7. जैगारनिक प्रभाव पर प्रयोज्य का अहम् (ego-involvement) का भी प्रभाव पड़ता है। अहम्-उलक्षन से तात्पर्य उस परिस्थिति से होता है जिसमें व्यक्ति का अहम् (ego) किसी कारणवश अधिक उत्तेजित एवं चिंतित हो उठता है। अहम् उलझन से व्यक्ति में डर भी उत्पन्न हो सकता है और खुशी तथा उम्मीद भी। यदि अहम् उलझन से खुशी तथा अच्छी उम्मीद बन रही है, तो वैसी परिस्थिति में व्यक्ति अधूरा कार्य (uncomplete task) को अधिक-से-अधिक प्रत्याह्वान करना चाहता है। फलस्वरूप, जैगारनिक अपुनात अधिक स्पष्ट होगा। परन्तु अधूरा कार्य से व्यक्ति डर उत्पन्न हो गया है, तो वह स्वभावत: इसक प्रत्याह्वान नहीं करेगा और तब जैगारनिक अनुपात अस्पष्ट होगा। गिलक्समैन (Glixman, 1948, 1949) ने अपने प्रयोगों के आधार पर यह बतलाया है कि अधिक डर तथा दुश्चिंता (anxiety) उत्पन्न होने से जैगारनिक प्रभाव अस्पष्ट हो जाता है।

इस तरह सक हम देखते हैं कि जैगारनिक प्रभाव (Zeigarnik effect) एक महत्पूर्ण संप्रत्यय (concept) है जिसके सहारे सिर्फ हम आवश्यकता-तनाव (need-tension theory) का समर्थन ही नहीं करते हैं बल्कि अधूरा कार्यों की तीक्ष्ण स्मृति (sharm memory) की घटना की भी व्याख्या करते है। जैगारनिक प्रभाव पर कुछ भारतीय मनोवैज्ञानिकों द्वारा भी महत्वपूर्ण अध्ययन किये गए हैं। उन्होंने 80 प्रयोज्यों को आइजेन्क व्यक्तित्व आविष्कारिका (Eysenck Personality Inventory) के प्राप्तांको के आधार पर चार समूहों में बांटाता-तंत्रिकातापी बहिर्मुखी (neurotic extroverts), तंत्रिकातापी अन्तुर्मुखी (neurotic introvert), स्थिर वहिर्मुखी (stable extroverts) तथा स्थि अन्तर्मुखी (stabl;e introvert) । इनमें पुरूष तथा महिला दोनों श्रेणी के वैसे प्रयोज्यों का चयन किया गया था जिनका प्राप्तांक प्रोगेसिव मैट्रिसेज पर PR_{60} से उपर था। इन प्रयोज्यों को 18 तरह के कार्य दिए गए जिनमें 6 शाब्दिक कार्य 6 क्रियात्मक (performance) कार्य तथा 6 समस्या समाधान कार्य (Problem solving tasks) थे। परिणाम में देखा गया कि महिलाओं में जैगारनिक प्रभाव पुरुषों की अपेक्षा अधिक थे। वयस्कों में जैगारनिक प्रभाव नहीं पाया गया तथा विलम्बित प्रत्याह्वान (delayed recall) में जैगारनिक प्रभाव बढ़ता पाया गया। उसी

तरह से तंत्रिकातापी अन्तर्मुखी में सर्वाधिक उच्च जैगारनिक प्रभाव तथा स्थिर अन्तर्मुखी में निम्नतम जैगारनिक प्रभाव देखा गया। यू. पी. सिंह तथा एल. वी. सिंह (U. P. Singh & L. B. Singh, 1980) ने भी जैगारनिक प्रभाव की वैधता को अपने अध्ययन से सही ठहराया है।

1.8 सारांश (Summing-up)

- अभिप्रेरण व्यक्ति की एक आन्तरिक अवस्था है जो आवश्यकता से उत्पन्न होती है तथा एक निश्चित लक्ष्य की प्राप्ती के लिए क्रियाशील रहती है।
- मुख्य रूप से इसके तीन तत्व होते हैं- आवश्यकता (need) प्रणोदन (drive) एवं प्रोत्साहन (Incentive) सर्ब प्रथम व्यक्ति में आवश्यकता उत्पन्न होती है जो फिर उसमें प्रणोदन उत्पन्न करता है जिससे वह लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आगे बढ़ता है।
- मनोवैज्ञानिकों के अभिप्रेरणा के कुछ सिद्धान्त दिए हैं जिनमें प्रणोदन सिद्धान्त (Drive theory) और आवश्यकता पदानुक्रम सिद्धान्त (Need Hierarcy theory) मुख्य हैं।
- व्यक्ति के कुछ व्यवहार आन्तरिक (Intrinsic) रूप से पुरस्कृत होते हैं जबकि कुछ वाह्य (Extrinsic) रूप से।

जब व्यक्ति किसी कार्य को अपनी खुशी मात्र के लिए करता है या उसमें उसकी अभिरुचि (Interest) होती है तो यह कहा जाता है कि व्यक्ति में उस कार्य के लिए आन्तरिक अभिप्रेरण (Intrinsic motivation) है।

वाह्य अभिप्रेरण (Extrinsic motivation) का तात्पर्य या संदर्भ उन व्यवहारों से है जो व्यक्ति बाहरी पुरस्कार पाने या दण्ड से बचने के लिए करता है।

1.9 मॉडल प्रश्न (Model Questions)

1. अभिप्रेरणा को परिभाषित करें। अभिप्रेरित की व्याख्या करें।
   Explain the nature of motivation. Explain the Concept of motivated behaviour.
2. अभिप्रेरणा के संदर्भ में आवश्यकता, प्रणोदन एवं प्रोत्साहन की विवेचना करें।
   Critically explain the need, drive and incentive theory of motivation.
3. अभिप्रेरण के प्रणोदन सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या करें।
   Critically explain the dirve theory of motivation.